चन्दामामा
माँ–बच्चों का मासिक पत्र

पुराने जमाने में, रूस देश के किसी गाँव में एक धनवान रहता था। उसकी एक लड़की थी जिसका नाम 'सोनिया' था। सोनिया की माँ बचपन में ही मर गई थी। इसलिए बाप ने दूसरा व्याह कर लिया था। इस दूसरी पत्नी से उसकी एक लड़की हुई जिसका नाम 'नटाषा' था।

ज्यों-ज्यों नटाषा बड़ी होती गई त्यों-त्यों उसकी माँ के मन में अपनी सौतेली लड़की के प्रति जलन बढ़ती गई। अब माँ-बेटी दोनों मिल कर सोनिया बेचारी को बहुत सताने लगे।

सोनिया बहुत सुन्दरी और बड़ी शीलवती थी। सौतेली माँ उसे बहुत तकलीफ देती थी, लेकिन वह चूँ तक न करती थी। घर का सारा काम-काज वह हँसते-खेलते कर लेती थी। यह सब उसके पिता को भी मालूम था। लेकिन वह कुछ नहीं कर सकता था।

अन्त में माँ-बेटी दोनों ने तय कर दिया कि किसी-न-किसी बहाने सोनिया को घर से निकाल देना चाहिए। उन्होंने सोचा कि इसे एक ऐसा कठिन काम सौंपना चाहिए, जिसे वह पूरा न कर सके। उसे फिर पर लौटने का मौका नहीं मिले और वह जङ्गलों में मारी-मारी फिरे।

दिसम्बर का महीना था। कड़ाके की सर्दी पड़ रही थी। रूस देश का जाड़ा हमारे देश के जाड़े से कहीं भीषण होता है। जाड़े के दिनों में वहाँ सारी जमीन बरफ से ढक जाती है। पेड़-पौधों को पाला मार जाता है। ऐसे समय सौतेली माँ ने सोनिया से कहा-"बेटी ! उस पहाड़ पर एक फूल है जो दवाई के काम में आता है। जाकर किसी न किसी तरह वह फूल ले आओ ! जल्दी जाओ !" उसने हुक्म दिया। सोनिया तुरन्त खुशी-खुशी घर से निकली।

सरोजकुमारी

बस, माँ-बेटी ने सोचा-"बला टल गई! अब वह कभी घर लौट कर न आ सकेगी!" दोनों फूले न समाए।

बरफ से ढकी जमीन पर बहुत दूर तक चल चल कर सोनिया अन्त में उस पहाड़ के पास पहुँची। सारा पहाड़ बरफ से ढका हुआ था। अन्धेरा हो गया था। कहीं राह नहीं सूझती थी। हाँ, सूदूर ऊँचाई पर कभी कभी एक रोशनी टिमटिमा जाती थी। सोनिया उसी रोशनी पर नजर गड़ाए सीधे उसी की ओर चलने लगी।

वह ज्यों ज्यों नजदीक होती गई त्यों त्यों रोशनी बढ़ती गई। सोनिया को बहुत अचरज हुआ। वह और भी नज़दीक चली गई। यहाँ एक बहुत बड़ा अलाव जल रहा था। उसके चारों ओर बहुत से अजीब आदमी बैठे आग ताप रहे थे। सोनिया साहस करके सीधे उनके पास चली गई। जाते ही उसने सब को प्रणाम किया। कुल ग्यारह आदमी थे। एक ओर ऊँचे सिंहासन पर एक बूढ़ा राजा था, जो हाथ में राजदण्ड पकड़े बैठा हुआ था। उसी ने सोनिया का प्रणाम स्वीकार किया। ग्यारह लोग जो नीचे बैठे हुए थे, उन में से एक ने सोनिया से कहा-"बेटी ! तुम कौन हो ? इस दुर्गम प्रदेश में जहाँ कभी मनुष्य के चरण नहीं पड़े, इतनी रात गए तुम कैसे पली आई ! हम लोग महीनों के राजा है। जनवरी, फरवरी, मार्च, एप्रिल वगैरह हमारे नाम हैं। साल के बारह महीनों में हम एक एक महीना राजा बनते हैं। अभी जो सिंहासन पर बैठे हुए हैं, वे राजा दिसम्बर हैं।"

सोनिया तुरन्त राजा दिसम्बर की तरफ मुड़ी। जलती आग की लाल लाल लपट में उसका चेहरा कुन्दन की तरह दमक उठा। उस चेहरे पर मुसकुराहट थी, मगर वह एक

मासूम उदासी के बोझ से दबी हुई सी थी। उसने अपनी सारी कहानी राजा दिसम्बर से कह सुनाई। तुरन्त राजा दिसम्बर ने उसे धीरज बँधाया और खुद गद्दी से उत्तर कर नीचे बैठे हुए राजा जून को उस पर बैठने को कहा।

जून ने सिंहासन पर बैठ कर राजदण्ड जो एक बार दिलाया तो पहाड़ पर जमी हुई सफेद बरफ पिघल कर पानी बन गई और देखते देखते सारी जमीन हरी-भरी हो गई। पेड़-पौधे लहलहा उठे। खेत फसलों से लद गए। फूल झूम कर हँसने लगे और वृक्षों की शाखाएँ फूलों के भार से नम्र हो धरती की चूमने लगी।

यह देख कर राजा जून ने सोनिया से कहा-"बेटी, अब तुम जितने फूल चाहो, तोड़ ले जाओ!" खुशी से उछलती सोनिया ने बहुत से फूल तोड़ लिए। राजा जून ने यह वरदान भी दिया कि घर पहुँचने तक उसके फूल मुरझायेंगे नहीं ! इस तरह सोनिया की इच्छा पूरी करके राजा जून गद्दी से उतर गया और फिर तापने के लिए आग के पास जा बैठा। तुरन्त राजा दिसम्बर उठे और जाकर फिर गद्दी पर विराजमान हो गए। बस, सारी हरियाली देखते-देखते छूमन्तर हो गई और पहाड़ी पर फिर से बरफ जम गई।

सोनिया ने उन बारहों महीनों के राजाओं को अपना एहसान बनाया और विदा लेकर घर लौट पड़ी। सोनिया को सही-सलामत लौटी देख कर माँ-बेटी दोनों दङ्ग रह गई। उन्होंने स्वप्न में भी नहीं सोचा था कि कभी सोनिया जिन्दा लौट सकेगी। ये असमय के फूल उसे कहाँ मिले। यह असम्भव कार्य कैसे सम्भव हुआ? यह सब कुछ सोचने के बाद वे सोनिया से और भी जलने लगी। "बोलो, तुम ये फूल कहाँ से ले आई हो?

बताओ।" उन्होंने गरज कर पूछा। बेचारी सोनिया ने सारा हाल बता दिया। बस, नटाषा के मन में उमङ्ग पैदा हुई कि "चलो, ये दुर्लभ फूल हम भी ले आएँ।" वह तुरन्त घर से चली और अनेक कष्ट उठा कर किसी तरह उन पहाड़ों पर पहुँची। उसे भी दूर से रोशनी दिखाई दी और नज़दीक जाने पर आग के चारों ओर बारहों महीनों के राजा भी दिखाई दिए।

एक राजा ने फिर वही सवाल किया जो उसने सोनिया से किया था। "जा जा । तुझे क्या पड़ी है कि मैं कौन हूँ !" नटाषा ने उसे झिड़क दिया और आगे बढ़ चली। वह चार कदम भी नहीं गई थी कि राजा दिसम्बर ने अपना राजदण्ड घुमाया और झट बरफ की चट्टानें उस पर टूट पड़ी। वह उनके नीचे दब गई और उसका नाम निशान भी न रहा।

नटाषा की माँ ने बहुत दिन तक उसकी राह देखी। जब वह लौट कर नहीं आई तो वह स्वयं उसकी खोज में चली। वह भी अनेक श्रम उठा कर पहाड़ों पर पहुँची। महीनों के राजाओं ने उससे भी वही सवाल किया। उसने भी अपनी बेटी के जैसा ही जवाब दिया। इसलिए उसकी भी वही हालत हुई जो उसकी लड़की की हुई। दोनों को अच्छी सजा मिली।

जब वे दोनों लौट कर नहीं आई तो सोनिया बेचैन हो गई। वह फिर उस पहाड़ पर गई। तब राजाओं ने उसे सारा हाल कह सुनाया। सोनिया के गिड़गिड़ाने पर उन्होंने माँ-बेटी दोनों को फिर से जिन्दा कर दिया। जो फूल हमेशा जून में खिलते थे उनको राजा जून ने सोनिया के वास्ते दिसम्बर में ही खिला दिया। इसी से इनका नाम 'दिसम्बर के फूल' पड़ गया।

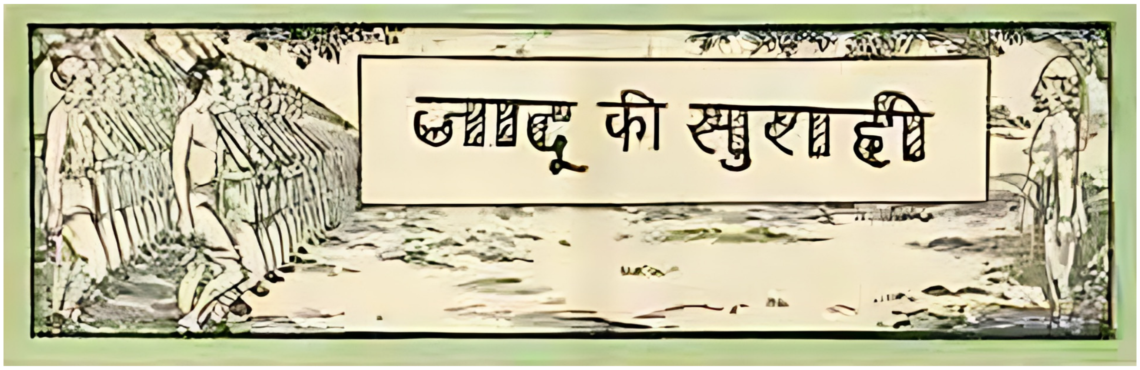

एक गरीब लकड़हारा रोज जङ्गल जाकर लकड़ियाँ काट कर ले आता और उन्हें शहर में बेच कर अपनी रोजी चलाता था। वह बहुत मेहनत करता था। फिर भी उसकी आमदनी तीन आने रोज़ से ज्यादा न होती थी। तीन आने से उसके परिवार का पेट कैसे भरता ? यों अधपेट रहते-रहते उसका जी ऊब गया।

आखिर उसने वह शहर छोड़ देने का निश्चय किया। एक दिन वह उठा और चुपके से घर-बार छोड़ कर चल दिया। जाते-जाते रास्ते में उसे बहुत भूख लगने लगी। लेकिन भूख मिटाने के लिए वह करता क्या ? ऐसे ही चलता गया।

और थोड़ी दूर जाने के बाद उसे एक बहुत बड़ा मैदान दिखाई दिया। उस मैदान में बहुत से सिपाही कई कतारों में खड़े कवायद कर रहे थे। वे कह रहे थे-"बुधवार नहीं, सोमवार सोमवार नहीं, बुधवार ! राइट, लेफ्ट राइट, लेफ्ट !" लकड़हारा कवायद देखते-देखते अचरज से भरा, वहाँ खड़ा रह गया।

थोड़ी देर में सिपाहियों की कवायद ख़तम हो गई। वे लोग खाने बैठे। लेकिन किसी ने लकड़हारे को नहीं बुलाया और न उसे वहाँ से भगाने की ही कोशिश की। बेचारे लकड़हारे के पेट में चूहे दौड़ रहे थे। इसलिए वह चुपचाप जाकर एक परोसे हुए पतल पर बैठ गया और जल्दी-जल्दी खाने लगा।

किसी ने कुछ नहीं कहा। लेकिन खा-पीकर, हाथ-मुँह धोकर, जब वह यहाँ से जाने लगा तो सिपाहियों ने उसे पकड़ लिया और कहा-"भैया ! तुम इस तरह नहीं जा सकते ! तुमने हमारा नमक खाया है। आओ, कुछ काम तो करो !" लाचार हो

कुमारी कनकलता

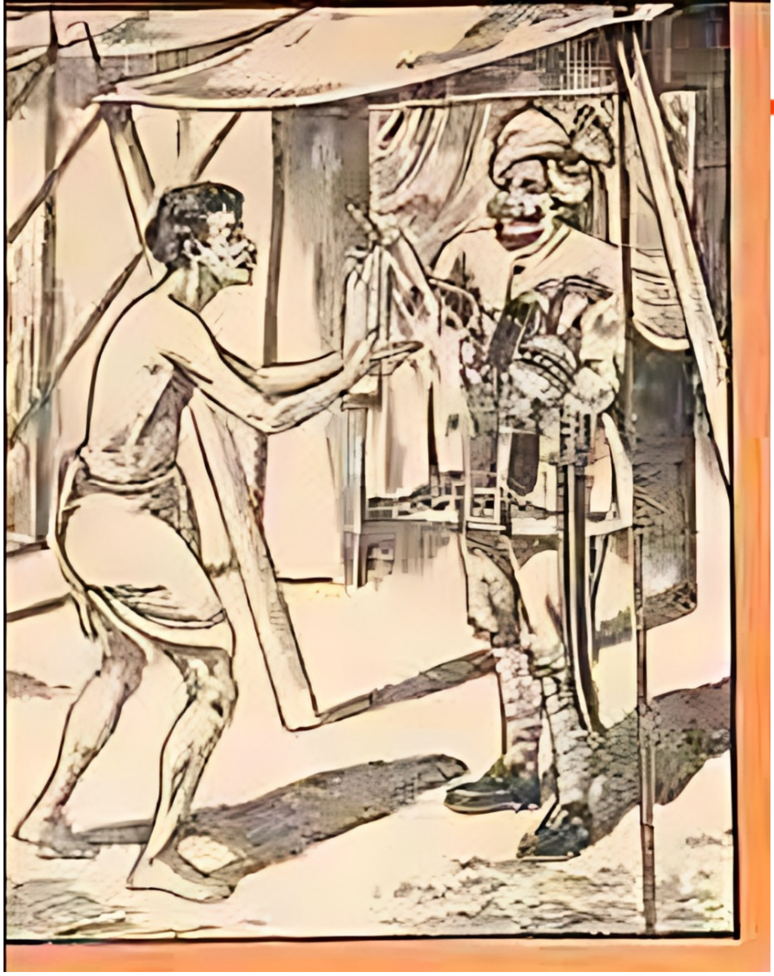

यह सुन कर लकड़हारा बहुत पछताने लगा। खैर, पाँच साल तक वह वहीं नौकरी करता रहा। ज्यों ही पाँच साल बीत गए त्यों ही उसने सेनापति के पास जाकर छुट्टी माँगी। सेनापति ने उसकी सेवा से खुश होकर उसे एक कमर-बन्द, एक बंशी, एक पुराना कुरता और एक अजीव सुराही, ये चारों चीजें भेंट की और छुट्टी दे दी। लकड़हारा वे चीजें लेकर अपनी झोंपड़ी में चला आया और पहले की तरह लकड़ियाँ बेच कर रोजी चलाने लगा।

कर लकड़हारा भी उनके साथ "बुधवार नहीं, सोमवार ! सोमवार नहीं, बुधवार ! लेफ्ट राइट ! लेफ्ट राइट !" कहते कवायद करने लगा। रात को वह उन्हीं के पहाव में सो गया और सवेरे उठकर जाने लगा।

लेकिन सिपाहियों ने उसे जाने नहीं दिया। वे लोग बोले-"भई ! जो हमारा नमक खाता है उसे कम से कम पाँच साल तक हमारी नौकरी करनी होती है। कभी-कभी तो पश्चीस साल तक उसे छुटकारा नहीं मिलता। ऐसा ही हमारा कायदा है।"

एक दिन उसे सेनापति की दी हुई चीज़ों की याद आई। उसने कमर-बन्द निकाल कर बाँध लिया और जङ्गल चला गया। उस दिन भी उसे तीन ही आने मिले। वह उन्हें कमर-बन्द के बटुए में डाल कर उदास मन से घर लौट चला।

थोड़ी देर बाद वह बाजार गया। एक दूकान के पास जाकर उसने पैसे निकालने के लिए बटुआ खोल। खोलते ही मुँह बाए देखता खड़ा रहा गया। क्योंकि चटुए मैं तीन आनों के बदले तीन अशर्फियाँ थी। लकड़हारा अचरज से भर गया। वह चुपके से घर लौट गया।

दूसरे दिन भी उसे वही तीन आने मिले। लेकिन कमर-बन्द के बटुए के प्रभाव से वे असरफियाँ बन गए। तब कहीं लकड़हारे की समझ में आया कि इस बटुए की कृपा से उसकी तकदीर खुल गई है।

बटुए में रखा हुआ हरेक आना एक अशर्फी बन जाता था। फिर लकड़हारा धनवान क्यों न हो जाता। देखते-देखते वह लखपती बन गया।

कुछ साल तक सुख से जीने के बाद लकड़हारा चल बसा। अब उसका लड़का लकड़ियाँ बेचने का काम करने लगा। उसे भी बहुत मेहनत करने पर रोज तीन आने पैसे मिलते थे। जिन्दगी बड़ी मुश्किल से कट रही थी।

एक दिन वह बहुत दुखी होकर माँ के पास गया और बोला-"माँ ! बहुत मेहनत करने पर भी दिन भर में तीन आने से ज्यादा नहीं कमा पाता हूँ। पिताजी भी तो लकड़ियाँ बेचते थे। मगर न जाने कहाँ से अशर्फियाँ उठा लाते थे। जरूर इसमें कुछ-न-कुछ रहस्य छिपा हुआ है। क्या तुम इसके बारे में कुछ नहीं जानती हो?" इतना कह कर वह हठ करने लगा।

माँ ने बहुत कोशिश की कि कोई बहाना करके टाल दे। लेकिन बेटे ने जिद न छोड़ी। बोला-"जब तक तुम वह भेद बताओगी नहीं, तब तक में मुँह में पानी भी नहीं डालूँगा।"

आखिर माँ का दिल ही था, पिघल गया। यह बेटे को एक छोटी कोठरी में ले गई और बोली-"लो, बेटा! यह सब तुम्हारे पिता की कमाई है। मैं नहीं चाहती थी कि तुम मुफ्त का माल उड़ाओ और निकम्मे हो जाओ। इसलिए मैंने इतने दिनों से तुम्हें कुछ नहीं बताया। अब तुम्हारी मरजी।"

उस कोठरी में अशर्फियों के ढेर लगे हुए थे। बस, उन्हें देख कर लड़के की आँखें चौंधिया गई। उसने सोचा-"मेरे पास इतना रुपया है। तब तो में राजा की बेटी से भी ब्याह कर सकता हूँ।" यह सोच कर दूसरे ही दिन लकड़हारे के लड़के ने अपने एक आदमी द्वारा राजा को खबर भेजी कि वह राजकुमारी से शादी करना चाहता है।

यह सन्देश सुन कर राजा ठठा कर हँस पड़ा। "अच्छा! मैं अपनी बेटी उसे जरूर ब्याह दूँगा। लेकिन पहले एक सौ बोरे अशर्फियाँ नज़राने में भेजने को कहो !" राजा ने मजाक के तौर पर दूत से कह दिया।

राजा का सन्देश सुन कर लकड़हारे का लड़का बोला-"अच्छा, महाराज की जो इच्छा ! उनकी आज्ञा का पालन करूँगा।" यह कह कर उसने पिता की कमाई अशर्फियाँ बोरों में भरवाई।

निन्नानबे बोरे भर गए। लेकिन एक बोरा आधा खाली रह गया। तब लड़का अपनी माँ के पास जाकर बोला-"पिताजी की अशर्फियों से निन्नानबे बोरे भर गए। लेकिन एक बोरा खाली रह गया। बताओ! और कहीं कुछ अशर्फियाँ छिपा तो नहीं रखी हैं !"

माँ ने उसे बहुत समझाया कि और कहीं अशर्फियाँ नहीं है। लेकिन यह हठ करने लगा। तब माता ने पिता का कमरबन्द लाकर उसे दे दिया और उसका भेद बता दिया। उस कमर-बन्द के प्रभाव से लकड़हारे के लड़के ने कुछ ही दिनों में अशर्फियाँ जमा करके वह बोरा भी भर दिया और सौ बोरे राजा के पास भेज दिए।

सौ बोरे अशर्फियाँ देख कर राजा दङ्ग रह गया। उसने लड़के को बुलवाया और

कहा-"बेटा! हम अपने वादे के मुताबिक राजकुमारी का यह तुम से करने को तैयार हैं। हमें कोई एतराज नहीं। लेकिन पहले यह तो बताओ कि इतने थोड़े समय में तुम सौ बोरे अशर्फियाँ कैसे जमा कर सके ? यह भेद मालूम होते ही व्याह की तैयारियाँ हो जाएगी।" राजा ने बनावटी दुलार दिखाते हुए पूछा।

लकड़हारे के लड़के ने राजा की सारी बातें सच मान ली। उसने झट कमर-बन्द का भेद बता दिया। भेद जानते ही राजा बोला-"अरे अभागे। मैंने तो समझा था कि यह सब तेरी बहादुरी है। लेकिन यह सब तो कमर-बन्द की करामात है; फिर तेरी बड़ाई क्या रही ? यह कमर बन्द तो हमारे जैसे राजाओं के पास रहने लायक है। तुझ जैसे अभागे इसे लेकर क्या करेंगे ! यह कह कर उसने सिराहियों को हुक्म दिया कि कमर-बन्द छीन लो! सिपाहियों ने जबदस्ती लकड़हारे के लड़के का कमर-बन्द छीन लिया और उसे धक्का देकर निकाल दिया । बेचारा अब क्या करता ! रोता-पीटता पर लौटा और सिर झुका कर माँ से सारा हाल कह सुनाया।

इकलौते बेटे को यों रोते देख कर माँ से न रहा गया। उसने बंशी लाकर

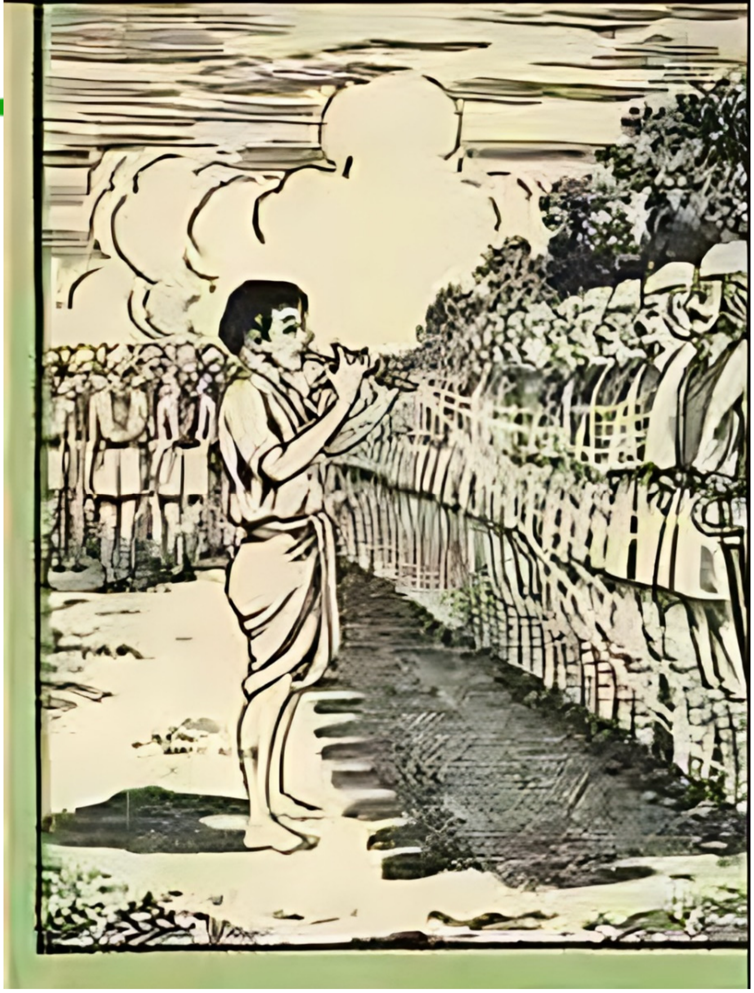

उसे दे दी और बोली-"बेटा! यह बंशी तुम्हारे पिता की कमाई है। जाओ, इसे ले जाओ! कौन जाने, शायद इससे तुम्हारी किस्मत पलट जाए।"

लड़का बाहर जाकर बंशी बजाने लगा। एक बार बजाते ही एक सिपाही उसके सामने आकर खड़ा हो गया। दुबारा बजाई तो दुसरा सिपाही आ खड़ा हुआ । इस तरह जितनी बार उसने देशी बजाई उतने सिपाही आ खड़े हुए।

इस तरह लकड़हारे के लड़के ने एक बड़ी सेना खड़ी कर ली। उसकी सेना को

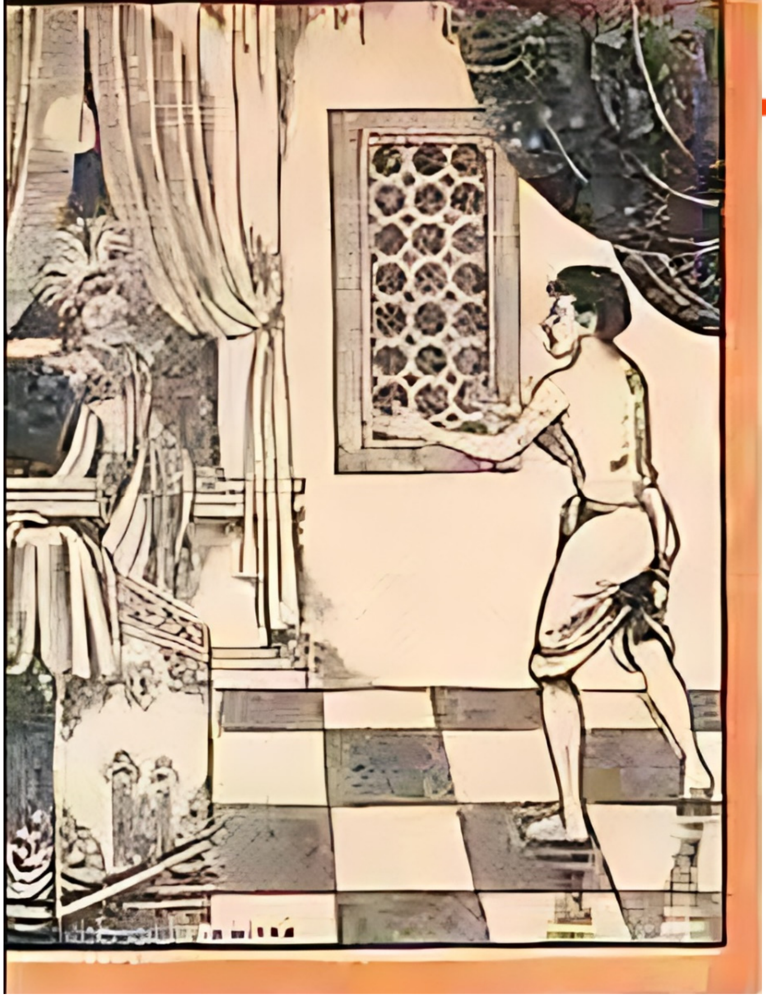

देख कर लोग डरने लगे। जब यह खबर राजा के पास पहुँची तो उसने तुरन्त उसे अपने पास बुलाया और कहा-"बेटा! हमें नहीं मालूम था कि तुम में ऐसी महत्ता है। इस बार में जरूर अपनी बेटी का ब्याह तुम से कर दूँगा। हाँ, पहले यह तो बनाओ कि तुमने ऐसी बड़ी सेना कहाँ से इकट्ठी कर ली ?"

राजा की बातें सुन कर लड़का फूल कर कुप्पा हो गया। झट उसने बंशी का भेद खोल दिया। बस, राजा ने तुरन्त सिपाहियों से कह कर उसे खूब पिटवाया और उसकी वंशी छीन ली।

लड़का फिर रोता-पीटता माँ के पास गया। इस बार माँ ने अपने पति का कुर्ता उसे दिया और बोली-"बेटा! अब तो सिर्फ यही बचा है। इसे भी ले जाओ और अपनी किस्मत आजमा लो।"

उस कुरते में ऐसा प्रभाव था कि उसे पहन लेने पर मनुष्य जहाँ जाना चाहे, तुरन्त वहाँ पहुँच जाता था। लड़के ने ज्यों ही कुरते पहना, त्यों ही वह राजा के किले में जा पहुँचा। वहाँ जाकर उसने कुर्ती उतार दिया। नहीं तो घर का ख्याल आते ही वह फिर घर पहुँच जाता। किले में घुस कर लड़का सीधे राजकुमारी के महल में गया। वह दूर से उसे देख कर बहुत खुश हुआ और इस तरह रोज़ उसे देखने जाने लगा। एक दिन जब मन में उठी तो उसने जाकर राजकुमारी को अपना परिचय दे दिया। यह देख कर राजकुमारी डर गई और उसने अपने पिता से सारा हाल कह दिया।

यह हाल सुन कर राजा ने उस कुरते को चुराने के लिए एक नौकर को भेजा। वह नौकर राजकुमारी के कमरे में, एक सन्दुक में छिप गया। ज्यों ही लकड़हारे के लड़के ने आकर, कुर्ता उतार कर वहाँ रखा, त्यों

ही वह उसे उठा ले भागा। तुरन्त राजा के नौकरों ने आकर उस लड़के को घेर लिया और पकड़ कर खूब लताड़ा।

लड़का किसी तरह जान बचा कर भागा और जाकर माँ के पैरों पर गिर पड़ा।

इस पर माँ को बहुत तरस आया। उसने अपने पति की आखिरी चीज यानी सुराही उसको दी और बोली- "बेटा! यह सब से आखिरी चीज़ है। अब इसे ले बाओ ! भगवान की कृपा से तुम्हारे सारे दुख दूर हो जाएँगे।"

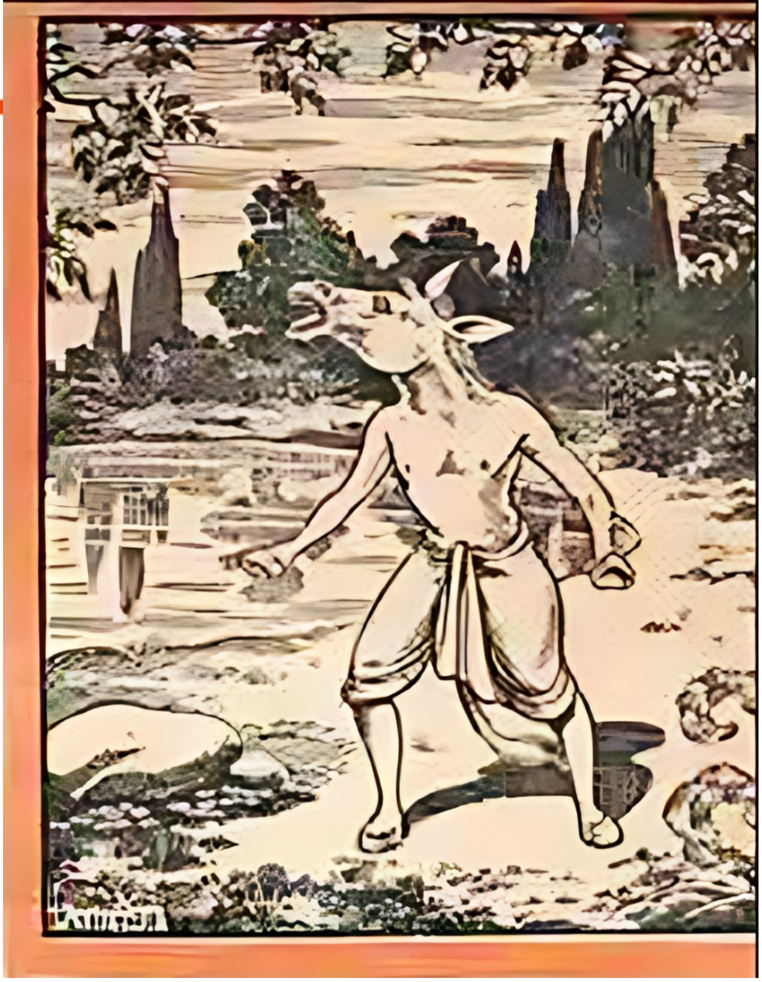

लकड़हारे का लड़का वह सुराही लेकर पहाड़ों में भाग गया। जाते-जाते उसे एक सुन्दर बगीचा दिखाई दिया। वहाँ पेड़ों पर तरह-तरह के फल लगे हुए थे। फल इतने नीचे लटक रहे थे कि हाथों से ही तोड़े जा सकते थे। लड़के ने एक बेर के पेड़ के पास जाकर एक फल तोड़ कर खाया। तुरन्त उसके सिर पर भेड़ों की तरह टेढ़े मेढ़े सीङ्ग निकलने लगे।

यह देख कर वह भौंचक्का रह गया। आखिर अमरूद के पेड़ के पास जाकर उस ने एक अमरूद तोड़ कर खाया। अमरूद खाते ही उसकी सूरत गधे की जैसी हो गई और वह रेंकने लगा। उसके नजदीक ही मैदान में हरी-भरी घास उग रही थी। यह उसे चरने लगा। घास चरते ही वह फिर आदमी बन गया।

बस, उसने वे फल तोड़ लिए और घास उखाड़ कर अपनी जेब भर ली। फिर एक योगी का भेष बना कर शहर में लौट आया। उस अद्भुत योगी को देख कर बहुत से लोग दर्शन करने के लिए आने लगे।

वह योगी एक पेड़ के नीचे आसन लगा कर बैठ गया। बहुत से लोग भाकर उसकी सेवा करने लगे। उनमें राजा के कई

दरबारी और नौकर भी थे। उन सब की योगी के ऊपर भारी भक्ति जम गई। योगी ने उन सब को एक-एक बेर खाने को दिया। तुरन्त उनके सिरों पर भेड़ों के से सीङ्ग निकल आए। यह देखते ही वे सब उस जोगी के पैरों पर गिर पड़े और मिन्नत करने लगे-"महाराज ! हम से कौन सा अपराध हुआ कि हमें आपने ऐसी सजा दी। कृपा करके यह शाप लौटा लीजिए!" यह कह कर वे गिड़गिड़ाने लगे।

"तुम्ही लोगों ने मारपीट कर मेरे कमरचन्द, बंशी और कुर्ता छीन लिए थे। जाओ, मेरी वे चीजें तुरन्त ले आओ और राजा से कह दो कि राजकुमारी से मेरा ब्याह कर दे। तभी तुम लोगों के माथे के ये सीङ्ग हट जाएँगे।" वह योगी बोला।

यह सुनते ही उन सबने पहचान लिया कि यह तो कोई योगी नहीं वही लकड़हारे का लड़का है। लाचार होकर वे सभी राजा के पास गए और बहुत कुछ कह-सुन कर उस की चीजें वापस दिलवा दी। इतना ही नहीं; आन-वान के साथ राजकुमारी से उसका ब्याह भी हो गया। तब कहीं जाकर लड़के ने उन्हें घास खिलाई और उनके सिर के सीङ्ग दूर हुए।

जब उस राज की प्रजा को लकड़हारे के लड़के की महानता मालूम हो गई तो उन्होंने राज में बगावत कर दी और उस बूढ़े राजा को गद्दी से हटा कर लकड़हारे के लड़के को उस पर बिठा दिया। लकड़हारे के लड़के ने राजा को एक अमरूद खिला दिया। अमरूद खते ही यह राजा एक गधा बन गया और रेंकता हुआ में भाग गया। इस तरह राजा को अपनी करनी का अच्छा फल मिल गया। इसी से कहा है-"जो जस करइ सो तस फल चाखा।"

भारत में मुगल बादशाहत की नींव डाली थी बाबरशाह ने। बाबर बहुत दिलेर आदमी था। नहीं तो वह इतने बड़े मुल्क को जीत कर यहाँ अपनी बादशाहत कैसे जमाता!

हाँ, यह तो सच है कि नींव डालने से ही इमारत खड़ी नहीं हो जाती। सलतनत की हिफाजत के लिए बादशाह को बहुत होशियार रहना पड़ता है। क्योंकि दुनिया में बादशाहों के दोस्तों से दुश्मन ही ज्यादा होते हैं। वे हर दम इस ताक में बैठे रहते हैं कि कैसे उसकी सरकार को जड़-मूल से उखाड़ फेंके। बाबर का कलेजा फौलाद की तरह मजबूत था। इसलिए उसने दुश्मनों की कोई परवाह न की और बेखौफ हुकूमत चलाता रहा।

बाबर के नौकरों में एक का नाम था अली। बादशाह उस पर बहुत भरोसा रखता था। अली भी मजे से खा-पीकर मटरगश्ती करता और बादशाह के मन-बहलाव के लिए तरह-तरह की बातें बनाता रहता।

एक दिन अली ने बादशाह से कहा-"जहाँपनाह! अल्लाह की हजुर पर ठण्डी नज़र है। इसी से उन्होंने आप को यह बादशाहत दी कि ऐशो-आराम से आप के दिन गुजरें !"

तब बादशाह बोला -"तो अली, तुम्हारा ख्याल है कि बादशाह ऐशो-आराम में दिन गुजारता है और उसे किसी बात की फिक्र नहीं होती !"

अली ने जवाब दिया-"इसमें कोई शक है हुजूर! सिर्फ इसी मुल्क में नहीं, बल्कि सारी दुनियाँ में आपके जैसा सुखी आदमी कोई है!" यह सुन कर बादशाह सोच में पड़ गया। आखिर उसने कहा-"अच्छा, अली! कल मैं तुम्हें एक दिन

अहमद रऊफ़

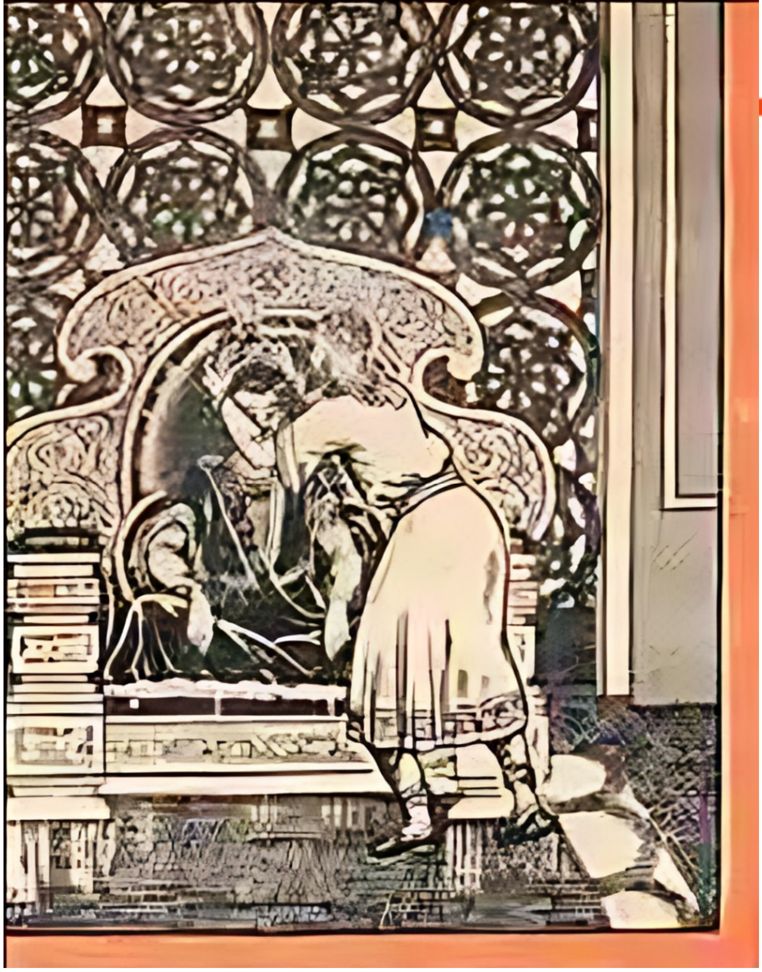

के लिए बादशाह बना देता हूँ। बाहशाह बन कर तुम खुद ही देख लोगे कि उसमें कैसा मजा आता है !" अली को अपने कानों पर आप ही यकीन न हुआ। "हुजूर ने क्या फरमाया ? क्या सच ही वे कल मुझे बादशाह बनाएँगे ?" उसने एक दूसरे नौकर से पूछा जो वहीं खड़ा था।

उस नोकर ने कहा-"हाँ भैया !" अब अली खुशी के मारे पागल सा हो गया। अब तो उसे कोई शक न रहा।

थोड़ी ही देर में ढिँढोरा सुनाई पड़ा कि कल एक दिन के लिए जनाब अलीखान बादशाह बनेंगे !

बड़े-बड़े अमीर उमराव ने अचरज के साथ यह खबर सुनी।

"कब स्वेरा हो और कब ताज मेरे सिर की रौनक बढ़ाए ?" इस धुन में लगे हुए अली को उस रात बिलकुल नींद न आई। सच पूछा जाए तो ऐसे समय किसी को नींद कैसे आएगी?

पौ फटते ही बाबर ने अली को बुला भेजा। उसने उसे शाही पोशाक पहना कर तख्त पर बिठाया और अपने हाथों से ताज उसके सिर पर रख दिया। उसके बाद एक बड़ी भारी दावत हुई। फिर दरबारी लोग आए और एक-एक कर अली को बन्दगी बजा कर नजराने देकर चले गए। अली की खुशी का ठिकाना न रहा।

दोपहर हुई। अली बाबर के साथ खाने बैठा। बहुत से खानसमे सोने की तश्तरियों में तरह-तरह की खाने की चीजें लेकर कतार में खड़े हो गए। अली ने वैसी चीजें कभी सपने में भी नहीं देखी था।

खास कर उनमें दिलखुश नाम की एक मिठाई थी जो वह बहुत दिनों से खाना चाहता था। आज उसे वह मौका मिला। उसने मिठाई तश्तरी में से उठाई और मुँह

में डालने ही जा रहा था कि उसकी नजर एक तलवार पर पड़ गई जो ठीक उसी के सर पर झूल रही थी। चनाचम चमकती वह पैनी तलवार रस्सी से नहीं लटक रही थी। वह झूल रही थी एक महीन बाल के सहारे ! उसे देखते ही ऐसा लगता था कि हवा के एक हल्के झोंके से ही टूट कर वह उसके सिर पर आ गिरेगी।

यह देख कर अली के होश-हवास उड़ गए। हाथ की मिठाई हाथ में ही रह गई ! माथे पर पसीना छूटने लगा और सारा बदन थर-थरा उठा। वह सोचने लगा-"कहीं वह तलवार टूट पड़ी, तो पल में मेरे प्राण पखेरू उड़ जाएँगे।"

"तोबा तोबा ! मुझे न चाहिए यह तख़्त, और न चाहिए यह ताज। मैं ऐसी बादशाहत नहीं चाहता। मुझे अभी यहाँ से जाने की इजाजत दीजिए।" यह कह कर वह वहाँ से उठने लगा। लेकिन बाबर ने उसे वहाँ से हिलने न दिया। उसने कहा- "अली! अल्लाह ने बादशाह को जो ऐशा आराम दिया है, उसका मजा कल सवेरे तक तो तुम्हें चखना ही होगा !" अली काँप कर मिन्नत करने लगा-"हुजूर ! मेरे सिर पर तलवार

झूल रही है। फिर मैं ऐश-आराम क्या करूँगा, खाक ?"

सच बाबर मुस्कुरा कर बोला- "अली! यही है बादशाह की जिन्दगी! तुम्हारे सिर पर जिस तरह तार झूल रही है, उसी तरह बादशाहों के सिर पर हमेशा मौत नाचती रहती है!"

"लेकिन आप तो मजे में रहते थे। आप को तो मैंने कभी उदास नहीं देखा !" अली ने हिम्मत करके पूछा।

"दिलेर लोग मौत से नहीं डरा करते। वे जिन्दगी का राज जानते हैं। इसलिए वे मामूली आदमियों की तरह हमेशा मौत को

देख कर काँपते नहीं रहते।" बादशाह बाबर ने जवाब दिया।

"अच्छा हुजूर! अब मुझे यहाँ से जाने दीजिए। कौन जाने, वह तलवार कब मेरे सिर पर टूट गिरे !" अली हाथ जोड़कर गिड़गिड़ाने लगा। नहीं, नहीं। ऐसा नहीं हो सकता। चौबीस घण्टों तक तुम्हें बादशाहत करनी ही होगी।" यह कह कर बादशाह ने सिपाहियों को बुलाया और वहाँ पहरा बिठा कर चले गए।

बेचारे अली के मुँह से एक लफ़्ज़ भी न निकला। चौबीस घण्टे किसी तरह जान हथेली पर रख कर, उसने उस गद्दी पर बिताए। मिठाई तो दूर रही पानी की एक घूँट भी उसके गले से न उतरी। सब चीज़ जहाँ की तहाँ रखी रह गई ।

"या अल्लाह! ये तूने मुझे कैसी सजा दी।" यह कह कर वह अपनी बेवकूफी पर पछताता एक-एक पल एक-एक युग के समान बिताने लगा। ज्यों ही चौबीस घण्टे पूरे हुए, खुदा को शुक्रिया देकर वह वहाँ से उठ भागने लगा। इतने में बाबर वहाँ आ गया।

"जानी दुश्मन को भी कभी यह ताज सिर पर रखने की सजा न मिले !" यह कह कर अली ने ताज बादशाह के सिर पर रख दिया। बाबर ने मुसकुरा कर कहा-"अली ! तुम नाहक डर गए। बाल महीन होने पर भी बहुत मजबूत होता है। उससे बँधी हुई चीज़ कभी टूट कर नहीं गिरती ! तुम्हारी बुजदिली ने ही तुम्हें हैरान कर दिया था। बहुत से लोग बादशाह को देख कर डाह करते हैं। वे सोचते हैं कि वे ही बादशाह क्यों नहीं बने। बेचारे नहीं जानते कि बादशाह बनने की लियाकत उन में नहीं है।" तब अली बोला "हुजूर का कहना बिलकुल ठीक है। दिलेर आदमी ही ताज का वजन ढो सकता है।" यह कह कर, वह बन्दगी बजा कर वहाँ से चला गया ।

काशी नगरी के एक राजा का नाम शकुन्तन था। वह बहुत बड़ा राम भक्त था। संसार के सब लोग उसकी भक्ति की बहुत प्रशंसा करते थे। धीरे-धीरे उस राजा को यह घमण्ड होने लगा कि संसार में उससे बड़ा राम-भक्त कोई है ही नहीं।

जब नारद मुनि ने राजा शकुन्तन के घमण्ड की बात सुनी तो उन्होंने सोचा-"किसी न किसी तरह इसका घमण्ड चूर कर देना चाहिए। नहीं तो यह इसी तरह चौपट हो जाएगा।" आखिर बहुत सोचने के बाद उन्हें एक उपाय सुझ गया।

कुछ दिन बाद उस राज के लोग झुण्ड के झुण्ड राजा के पास आने और विनती करने लगे-"राजन! जङ्गली जानवर हमें बहुत सता रहे हैं। आप हमारी रक्षा कीजिए।" उनकी बिनती सुन कर राजा जङ्गलों में शिकार खेलने चला गया। दोपहर तक शिकार खेलते-खेलते वह बहुत थक गया। तब नजदीक के एक तपोवन की ओर चल पड़ा। उस समय उस तपोवन में बहुत से ऋषि-मुनि एकत्र हो गए थे। राजा के पूछ ताछ करने पर पता चला कि वह विश्वामित्र मुनि का आश्रम है। राजा आश्रम के अन्दर चला गया। विश्वामित्र ने राजा को आया देख उठ कर स्वागत किया और कुशल-प्रश्न पूछा। कुछ देर तक आराम करने के बाद राजा यहाँ से चलने लगा। विदा लेते समय उसके मन में एक सन्देह पैदा हुआ। वहाँ जितने ऋषि-मुनि थे, सभी महान तपस्वी थे। कोई किसी से कम नहीं था। फिर वह पहले किसे प्रणाम करे और किस से विदा ले ! आखिर उसने सोचा-"सब से आगे तो बशिष्ठ जी ही बैठे हुए हैं। इसलिए पहले इन्हीं को प्रणाम करूँ।" यह सोच कर वह बोला -"वशिष्ठ जी ! मुनिगण !

मङ्गलदेव पाण्डे

अब अज्ञा हो मैं विदा लेता हूँ।" नारद मुनि वहीं बैठे हुए थे। उन्हें मौका मिल गया। वे तुरन्त विश्वामित्र के कान भरने लगे -"गाधि-पुत्र ! इस राजा का घमण्ड तो देखो ! तुम्हारे आश्रम में आकर यह बिदा माँगता है वशिष्ठ जी से ! क्या इसकी धृष्टता क्षमा कर दोगे तुम ?"

विश्वामित्र भड़क गए। बोले-"ठीक कहते हो नारद ! घमण्ड के मारे इसका विवेक मारा गया है। साधारण शिष्टता भी भूल गया है यह। अच्छा ठहरो ! पल भर में इसका घमण्ड चूर किए देता हूँ।" यह कह कर झट से भगवान रामचन्द्र के पास चले गए। वहाँ जाकर अत्यन्त आवेश में बोले-"राम ! एक बहुत जरूरी काम आ पड़ा है। पूरा करने का वचन दो तो बताऊँ !" भगवान रामचन्द्र जी आश्चर्य में पड़ कर बोले-"गुरुवर! यह आप क्या कहते है? क्या मैंने कभी आपकी आज्ञा टाली है? यों सङ्कोच क्यों कर रहे हैं ?"

यह सुन कर विश्वामित्र ने कहा- "सुनो, राम ! आज काशीराज शकुन्तन ने मेरा बड़ा मारी अपमान कर दिया है। जब तक तुम अपने अमोघ बाण से उसका कलेजा नहीं छेद दोगे, तब तक मुझे चैन नहीं मिलेगा।"

विश्वामित्र की बातें सुन कर भगवान सचमुच सोच में पड़ गए। उनके सामने एक बड़ी भारी समस्या खड़ी हो गई थी। एक ओर राजा शकुन्तन उनका बड़ा भारी भक्त था।

इधर गुरु की आज्ञा टाली नहीं जा सकती थी। आखिर किसी तरह उनके मुँह से निकला-"अच्छा!" इतना सुन कर विश्वामित्र चले गए।

उधर कलह-प्रिय नारद ने यह खबर राजा शकुन्तन को पहुँचा दी। नारद ने उससे कहा - "राजन् ! तुम्हारे इष्टदेव भगवान

रामचन्द्र जी ही तुम्हारी जान लेने जा रहे हैं।" तब राजा ने कहा-"मुनिवर, इस सङ्कट से बचने का कोई उपाय नहीं है !" तब नारद ने राजा को एक उपाय बता दिया। राजा शकुन्तन झट अञ्जना देवी के आश्रम मैं चला गया और "रक्षा करो ! रक्षा करो !" चिल्लाने लगा। उसका आर्तनाद सुन कर अञ्जना देवी दौड़ी आई। "भैया! डरने की कोई बात नहीं। बताओ तो सही, तुम पर कैसा सङ्कट आ पड़ा है !" उन्होंने राजा को ढाढस बँधा कर पूछा। तब राजा ने सारा हाल कह सुनाया।

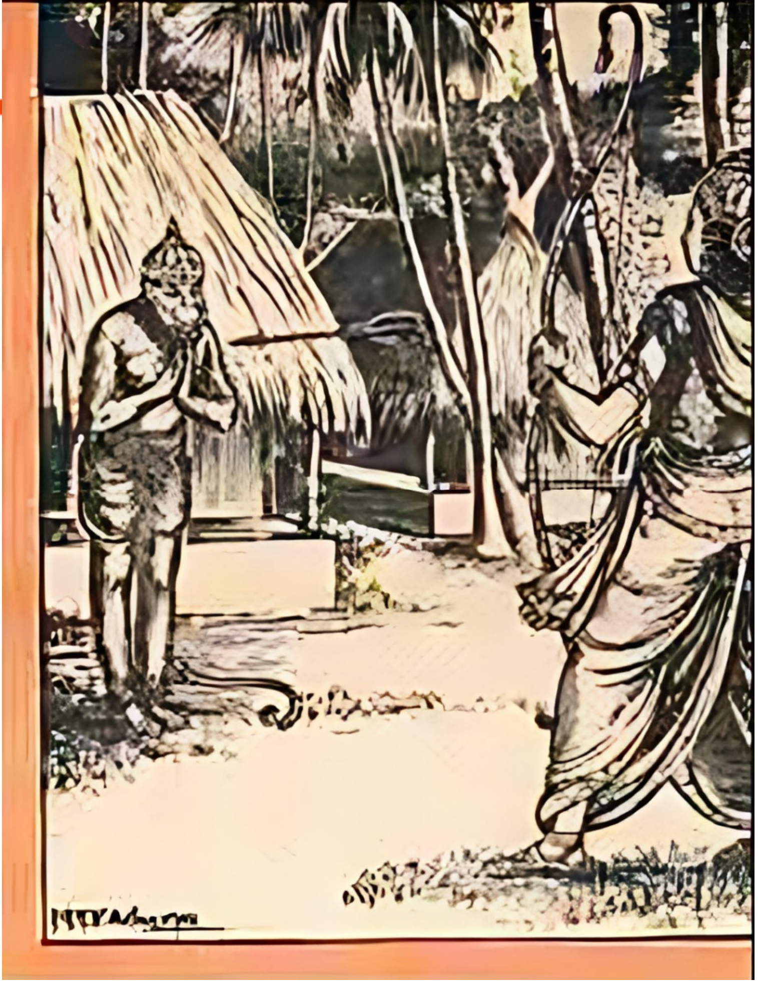

राजा की बातें सुन कर अञ्जना देवी भी सोच में पड़ गई। "हाय ! यह तो बहुत बुरा हुआ ! अब तो भगवान रामचन्द्र से लड़ाई है ! मला, शरण में आए हुए इस राजा की रक्षा अब कैसे की जाए।"

देवी यों सोच ही रही थी कि वीर-पुत्र हनुमान वहाँ आ पहुँचे। माँ को उदास देख कर बोले-"माँ ! आज तुम्हारा चेहरा उतरा हुआ क्यों है ? मेरे रहते तुम्हें चिन्ता किस बात की ! तुम्हारे लिए मैं क्या नहीं कर सकता हूँ ? कहो तो आसमान के तारे भी तोड़ लाऊँ !"

अञ्जना देवी आँसू बहाती हुई बोली-"बेटा! मैंने अनजाने इस राजा को अभय दे दिया है। मुझे नहीं मालूम था कि इस के कारण भगवान रामचन्द्र जी से युद्ध करना पड़ेगा। तुम्ही कहो, अब क्या किया जाए।

सब कुछ सुन करहनुमान ने कहा-"माँ ! तुम सोच न करो। जिस तरह राम का बाण अमोघ है, उसी तरह तुम्हारा वचन भी। मैं तुम्हारा वचन जरूर पूरा करूँगा, चाहे उसके लिए भगवान रामचन्द्र से ही लोहा क्यों न लेना पड़े। गुरु की आज्ञा भगवन रामचन्द्र के लिए शिरोधार्य है, वैसे ही मेरे लिए तुम्हारी आज्ञा भी!"

वे शेर की तरह गरज कर बोले। इतने में भगवान रामचन्द्र शकुन्तन को खोजते हुए वहाँ आ पहुँचे।

"हनुमान ! राजा शकुन्तन कहाँ है ? उसने गुरु विश्वामित्र का अपमान किया है। मुझे उसका वध करना है। छोड़ दो उसे !" भगवान ने आदेश दिया। "देव ! यह तो सम्भव नहीं दीखता। माता ने उस को अभयदान दे दिया। अब तो मेरे जीते जी कोई उस का बाल भी बाँका नहीं कर सकता।" हनुमान ने बड़ी नम्रता से कहा।

"अगर राम का बाण अमोघ हो तो वह काशीराज का कलेजा छेद दे।" इतना कह कर राम ने तब तीर छोड़ दिया।

"और अगर वह हनुमान सच्चा राम-भक्त हो, तो हे वाण ! इस काशीराज पर कोई आँच न आए !" यह कह कर हनुमान ने दोनों हाथ जोड़ कर उस बाण को भक्ति-पूर्वक प्रणाम किया। वायुवेग से सनसनाता हुआ रामबाण हठात् हवा में टँग गया जैसे उस पर किसी ने जादू कर दिया हो !

जैसे ही राम का अमोघ बाण स्तम्भित हुआ, तीनों लोक में भीषण हाहाकार मच गया। देवता और ऋषि-मुनि सभी दौड़े आए। "यह तो भक्त और भगवान का युद्ध है।" वे कहने लगे। आखिर सब को मालूम हो गया कि यह सब नारद जी की महिमा है ! "कुछ भी हो। राम का तीर कभी व्यर्थ नहीं होता।" भगवान बोले। "बहुत अच्छा। तो वह मेरे बक्ष को बिन्धे।" हनुमान बोले। बस, राम बाण हनुमान की छाती से पार हो गया। हनुमान के बिदीर्ण बक्ष में सब लोगों को श्री सीताराम की दिव्य मूर्तियाँ दिखाई दीं। सब लोग दङ्ग रह गए। राजा शकुन्तन ने लज्जा से शीस चुका लिया और सोचा कि यह तो मुझसे भी बड़ा राम भक्त है ! देवी अजना के स्पर्श मात्र से हनुमान की छाती फिर ज्यों की त्यों हो गई।

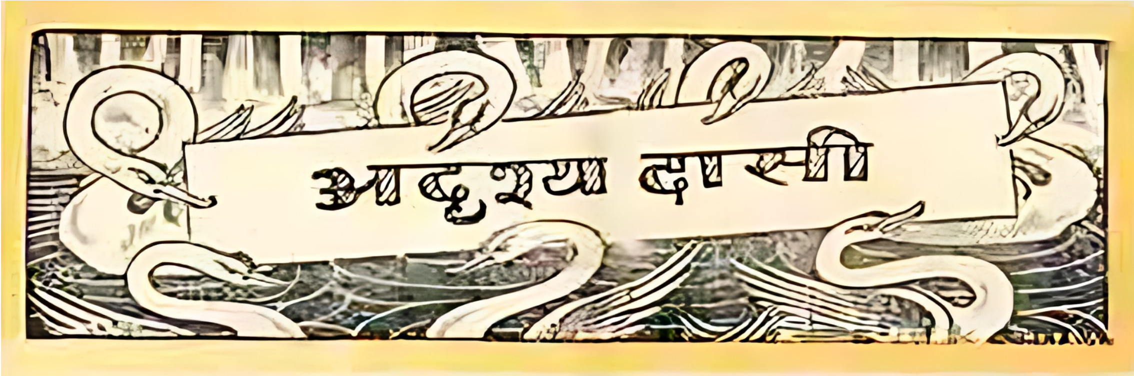

किसी समय दुष्टचित नाम का राजा था जिसकी राजधानी का नाम कल्पना नगर था। उस राजा की सेना में प्रताप नाम का एक बहादुर रहता था। प्रताप एक दिन जङ्गल में शिकार खेलने के लिए गया और सरोवर के किनारे एक झाड़ी में छिप गया। उसने सोचा कि घाट पर पानी पीने के लिए कोई जङ्गली जानवर आएगा तो वह उसे मार डालेगा।

लेकिन बड़ी देर तक ताक में बैठे रहने पर भी कोई जानवर पानी पीने नहीं आया। आखिर जब साँझ हो गई तो सात हंस आसमान से उड़ते उड़ते वहाँ उतरे। प्रताप मन-ही-मन उन्हें सराह रहा था कि इतने में उन हंसों ने अपने-अपने पंख उतार कर किनारे रख दिए और सुन्दर देवियाँ बन गए। वे देवियाँ किलकती हुई सरोवर में उतरी और जल-विहार करने लगी।

प्रताप दबे पाँव झाड़ी से बाहर आया और उन पंखों में से एक जोड़ी बहुत सुन्दर पंख लेकर फिर झाड़ी में छिप गया। देवियों का जल बिहार पूरा हुआ और वे किनारे पर आई। फिर अपने-अपने पंख लगा कर हंस रूप में वे आसमान में उड़ गई। इस तरह छः ही देवियाँ उड़ी। सातवी देवी को अपने पंख नहीं दिखाई दिए। इसलिए वह उड़ नहीं सकी और वहीं पंख खोजती रह गई। उसको देख कर प्रताप मुग्ध हो गया। इतने में उस देवी ने कातर-स्वर से पुकार कर कहा-"मेरे पंख किसी ने उठा लिए हैं। कृपा करके मुझे लौटा दें ! अगर वे बाल-बच्चे वाले हो तो मुझे भी अपनी सन्तान मान ले। अगर वे अनब्याही युवती हों तो मुझे अपनी सगी बहन मान लें। अगर वे कोई युवक हों तो मुझे अपनी पत्नी मान लें। मगर वे मेरे पंख ज़रूर लोटा दें।"

दुर्गासिंह

उसकी पुकार सुनते ही प्रताप का हृदय पिघल गया। झट झाड़ी से निकल कर उस के पंख उसके आगे रख दिए और बोला-"ये हैं तुम्हारे पंख। अब हंस बन जाओ और आसमान में उड़ जाओ! माफ कर देना। मैंने तुम्हें व्यर्थ इतना कष्ट दिया !"

लेकिन उस देवी ने पंख नहीं उठाए। वह बोली-"आप कौन है ? क्या आदमी भी इतना सज्जन होता है। क्या यह इतना सुन्दर भी होता है!" उसे बड़ा अवरज हुआ। यह सुनकर प्रताप मुसकुरा उठा और बोला- "इतनी तारीफ करती हो तो मुझे अपना क्यों नहीं बना लेतीं !" देव-बाला ने झट अपने गले का रत्नहार उतारा और प्रताप के गले में डाल दिया। इस अद्भुत सौभाग्य को देख कर प्रताप फूला न समाया। वह अपनी सङ्गिनी को लेकर शहर लौट गया।

धीरे-धीरे प्रताप की पत्नी की अलौकिक सुन्दरता की खबर राजा दुष्टचित्त के कानों में पड़ी। वह एक दिन भेष बदल कर उस के घर गया और अपनी आँखों देख भी आया।

दूसरे दिन उसने प्रताप को बुला भेजा और बनावटी प्यार दिखलाते हुए बोला-"प्रताप !सात समुन्दर पार एक जङ्गल है। उस जङ्गल में एक पहाड़ है। उस पहाड़ पर एक किला है। उस किले में रहता है राजा चित्राङ्ग जिसका नौ अंगुल का तो शरीर है और नब्बे गज की चोटी। उस राजा के यहाँ 'अदृश्य दासी' नाम की एक परी रहती है। उसे किसी तरह पकड़ लाओगे तो मैं तुम्हें अपना सेनापति बना दूँगा !

राजा की बात सुनकर प्रताप सोच में डबा हुआ घर गया और सब बात जाकर पत्नी को बता दी। तब देवी बोली-"इस में डरने की कोई बात नहीं! देखो, यह चाँदी की गेन्द ले लो। इसे शहर के बाहर जाते ही लुढ़का देना। लुढ़कती लुढ़कती

यह तुम्हें देव-लोक ले जाएगी और मेरे घर की राह बता देगी। तुम इसके पीछे-पीछे चले जाना। मेरे घर जाकर मेरा यह रत्नहार सब को दिखा देना और मेरा कुशल-समाचार सुना देना। बस, वे लोग तुम्हें कोई-न-कोई उपाय जरूर बता देंगे।" यह कह कर उसने चाँदी की गेन्द प्रताप को दी। प्रताप ने पत्नी के कथनानुसार काम किया और निर्बिघ्न समुराल पहुँच भी गया।

इसी बीच कल्पना-नगर के राजा दुष्टचित्त ने प्रताप की पत्नी देवबाला को बुलाया

और कहा-"तुम्हारा पति तो अब लौट कर आएगा नहीं ! देखो, में राजा हूँ। तुम मुझसे व्याह कर लो रानी बन कर और रहो!" उसकी बातें सुन कर देवबाला को गुस्सा आ गया। वह बोली-"क्या समझ लिया तूने मुझे ? खबरदार !" उसकी बात सुनकर राजा को कुछ कहने का साहस न हुआ। उसने उसे समुन्दर के किनारे एक दुर्गम भवन में नजरबन्द कर दिया।

इधर प्रताप जब देवलोक पहुँचा और देवबाला के घर वालों ने अपनी बेटी का रत्नहार देखा तो उसका बड़ा आदर-सत्कार किया और सब समाचार पूछा। प्रताप ने अपनी सारी

कहानी ससुराल वालों को सुना दी। तब प्रताप की सास ने चौरासी जीवों को बुला कर पूछा कि 'चित्राङ्ग का राज कहाँ है!" कोई कुछ नहीं बोला। मगर लँगड़े मेण्ढक ने कहा-"उसका हाल मुझे मालूम तो हैं, लेकिन वह जगह यहाँ से बहुत दूर है।" सास ने उस लँगड़े मेण्ढक को साथ करके प्रताप को विदा कर दिया।

प्रताप उस लँगड़े मेण्ढक के पीछे-पीछे चला। दोनों ने सात समुन्दर पार किए। फिर वे जङ्गल में घुसे। आखिर पहाड़ पर चढ़ कर दोनों चित्राङ्ग के किले के पास पहुँच गए। अब मेण्ढक प्रताप से बोला-

"भैया ! वही किला है। मैं यहाँ बैठ कर तुम्हारी राह देखूँगा। तुम अन्दर जाओ और अपना काम करके सकुशल लौट आओ !"

प्रताप मेण्ढक से विदा लेकर किले में घुसा। किला क्या था, एक काल-कोठरी ही थी। हाथ को हाथ नहीं सूझता था। प्रताप बड़ी मुश्किल से टटोलता-टटोलता आगे बढ़ा। कुछ दूर जाने पर वह बहुत थक गया और एक जगह बैठ गया।

बैठा ही था कि कहीं से दरवाजा खोलने की आवाज आई "अदृश्य दासी! अहश्य दासी।" किसी ने बादल की तरह गड़गड़ा कर पुकारा। सारा किला, तब तक जो अन्धेरे के सागर में डूबा हुआ था, अचानक हजारों दीपों के प्रकाश से जगमगा उठा। प्रताप फुर्ती से उठा और एक खम्भे की आड़ में छिप कर देखने लगा कि अब क्या होता है!

नौ अंगुल के शरीर और नव्वे गज की चोटी बाला एक आदमी उस ओर आ रहा था। प्रताप अचरज करने लगा कि यह इतने गम्भीर स्वर में कैसे बोल सका है। इतने में वह विचित्र व्यक्ति फिर चिल्लाने लगा- "अदृश्य दासी ! काहे की देरी हो रही है ! मैं तीनों लोक में सञ्चार करके थका-माँदा लौटा हूँ। क्या तू इतना भी नहीं जानती कि जल्दी से पैर पखारने के लिए पानी ला देना चाहिए?" इतने में प्रताप ने देखा कि एक सोने का कलश हवा में उड़ा चला आ रहा है। पैरों की आहट हो रही है। लेकिन कोई नहीं दिखाई देता। चित्राङ्ग ने पैर पखार लिए और फिर चिल्लाया-"जल्दी से भोजन परोस दो अदृश्य दासी ! मुझे अभी एक जगह जाना है !" झट आसन बिछ गया। पत्तल पर छप्पन प्रकार के व्यञ्जन आ गए और यह सब पल में हो गया। लेकिन उस दासी को प्रताप नहीं देख सका। चित्राङ्ग खा-पीकर डकारते हुए

कुल्ला करके, नोटी सँवार कर चला गया। उसके जाते ही सभी दीप बुझ गए।

तब प्रताप ने मधुरस्वर में कहा-"ओ अदृश्य दासी ! कृपा करके दीप जलाओ ! मुझे अन्धेरे में डर लगता है।" बस, जगमग करके दीप जल उठे। "मुझे बड़ी मूख लग रही है। क्या खाना नहीं परोस दोगी ?" प्रताप बोला। बस पत्तल आ गया और खाना परोस दिया गया। तब प्रताप ने कहा-"आओ! हे अदृश्य दासी। तुम भी मेरे साथ खाने बैठ जाओ !

तुमने अपने मालिक को खिला दिया; लेकिन खुद तो नहीं खाया।"

इस पर एक मीठी आवाज़ आई- "भैया! तुम कौन हो ? बहुत भले आदमी जान पड़ते हो ! कई सौ बरसों से मैं इस चित्राङ्ग की सेवा कर रही हूँ। लेकिन उसने इस तरह मीठे स्वर में कभी खाने को नहीं कहा !"

इतना कह कर वह अदृश्य दासी खाने बैठ गई। तब प्रताप बोला-"हे अदृश्य दासी! तुम मेरे साथ क्यों नहीं चल देती ?"

"जरूर चली आऊँगी। लेकिन एक बात है मैं अपने आप कोई काम नहीं कर सकती। मुझे हरेक काम

के लिए किसी का हुक्म लेना होता है। तुम हुक्म दो कि मेरे साथ चले आओ। में तुरन्त तुम्हारे साथ चली आऊँगी।" उस आवाज ने कहा। बस, प्रताप को उसका भेद मालूम हो गया। उसने मीठी बातों से अदृश्य दासी का मन मोह लिया था। "अदृश्य दासी ! तुम मेरे साथ चली आओ !" प्रताप ने हुक्म दिया। बस उसके पीछे-पीछे पैरों की आहट सुनाई पड़ने लगी।

किले के बाहर आते ही लँगड़ा मित्र, मेण्ढक बैठा दिखाई दिया। प्रताप ने कहा -"अदृश्य दासी। यह मेरा मित्र मेण्ढक है। तुम इसकी टाँग अच्छी कर दो!" बस,

तुरत मेण्ढक की टाँग चङ्गी हो गई। वह खुशी से उछलने-कूदने लगा। "हे अदृश्य दासी! अब मुझे तुरन्त ससुराल पहुँचा दो !" प्रताप बोला। पलक झपकते वे दोनों देवलोक पहुँच गए। प्रताप की सास ने आनन्द से कहा-"बेटा! तुम्हारी सज्जनता ही सब सफलताओं का कारण है। इसी सज्जनता ने मेरी बेटी का मन मोह लिया। इसी से यह परी भी तुम्हारे पीछे पीछे चली आई। अब जल्दी चले जाओ! मालूम होता है कि मेरी बेटी पर कोई आफत आई है। तुरन्त जाकर उसे बचाओ !"

बस, प्रताप ने तुरन्त हुक्म दिया-"हे अदृश्य दासी! अब मुझे कल्पना-नगर पहुँचा दो!" क्षण भर में वह कल्पना नगर पहुँच गया। सीधे राजा के पास जाकर वह बोला-"रे दुष्ट ! तूने मेरे साथ विश्वासघात किया है। माफी माँग ! नहीं तो!" यह सुन कर राजा ने सिपाहियों को हुक्म दिया-"देखते क्या हो ! पकड़ लो इस बदमाश को।" बस, बहुत से सिपाही प्रताप को घेरने लगे। उसने हुक्म दिया-"हे अदृश्य दासी! इन मूखों के होश ठिकाने लगा दो!" बस, अदृश्य दासी ने उन सब सिपाहियों को तिनकों की तरह उड़ाया और नगर से बाहर दूर ले जाकर फेंक आई। तब राजा तरवार निकाल कर प्रताप पर टूट पड़ा। प्रताप ने कहा-"अदृश्य दासी! इस दुष्ट को उसकी करनी का मजा चखा दो।" देखते ही देखते राजा दुष्टचित आसमान में उड़ चला। यो बहुत दूर तक ऊपर ले जाकर अदृश्य दासी ने उसे छोड़ दिया। वह धड़ाम से नीचे गिरा और ठण्डा हो गया।

फिर तो प्रताप कल्पना-नगर का राजा बना। देववाला उसकी रानी हुई। अदृश्य दासी के रहते उन्हें किस बात की कमी होती !

किसी समय चूड़ागाँव में मस्तान नाम का एक जुलाहा रहता था। गाँव बहुत छोटा था। इसलिए पेट भरना उसके लिए मुश्किल हो गया। तब मस्तान सोच में पड़ गया- "या ख़ुदा! अब में क्या करूँ?" आखिर उसने तय किया कि किसी दूसरे गाँव जाकर रोजी कमाए। वह अकेला था और उसकी सारी सम्पत्ति थी एक धुनकी। इसलिए एक दिन वह सवेरे उठा, धुनकी कन्धे पर रक्खी और राजगाँव नाम के एक दूर के गाँव की तरफ चल पड़ा।

राजगाँव और चूड़ागाँव के बीच दस कोस का फासला था। राह में एक बड़ा जङ्गल भी था। जङ्गल बहुत घना था और जाने के लिए सिर्फ एक पगडण्डी थी। मस्तान ने सोचा कि राह में खाने के लिए कुछ-न-कुछ लेते हुए चलना चाहिए। इसलिए एक आने का सत्तू खरीद लिया और पोटली बाँध कर लेता चला। दोपहर होते-होते उसके पेट में चूहे दौड़ने लगे। उन चूहों को चुप करने के लिए उसने सत्तू अन्दर फेंक दिया। फिर जो जगह खाली बच गई उसे उसने नाले के पानी से भर दिया। इस तरह आत्माराम को तृप्त करके धुनकी की ताँत को टङ्कारते हुए वह मजे-मजे में कदम बढ़ाने लगा।

चलते-चलते मस्तान, जिसके पैरों में पर लग रहे थे, एक जगह अचानक रुक गया। बात यह थी कि एक बघ जो झाडी में दुबका बैठा था, उसे देख कर निकल आया और राह रोक कर खड़ा हो गया। उसे देखते ही मस्तान की सिट्टी-पिट्टी गुम हो गई। लेकिन हाथ धुनकी को टङ्कारते ही रहे।

बाघ भी मस्तान को देखता और गुर्राता खड़ा रहा। न बाघ ने गुर्राना छोड़ा, और न मस्तान के हाथों ने ताँत को टङ्कारना ही।

रामदयाल दुबे

इतने में एक सियार वहाँ आया। उसने यह दृश्य देखा तो बाघ के पास जाकर बोला-"बाघ मामू! देखते क्या हो ? झपट कर उस आदमी को चट क्यों नहीं कर जाते !" इस पर बाघ ने कहा-"देखते नहीं ! उसके हाथ में एक अजीव बन्दूक है। उस को देख कर तो मुझसे न भागते ही बनता है, न खड़ा ही रहा जाता है !" उसने अपने मन का डर सियार से कह दिया।

सियार को मालूम था कि जुलाहे के हाथ में क्या चीज है। बाघ की बेवकूफी पर यह मन-ही-मन खूब हँसा। फिर बोला-"अच्छा! मामू, मेरे रहते तुम्हें डर किस बात का ? मैं जाकर उसे बातों में फँसाता हूँ। तुम धीरे से खिसक जाना !"

लेकिन बाघ को हिम्मत न हुई। उसने कहा-"लेकिन मुझे यह कैसे मालूम हो कि वह मेरी ओर नहीं देख रहा है !" तब सियार बोला-"यह तो कोई बड़ी बात नहीं है! एक बार जहाँ में 'हुआँ' करूँ कि तुम भाग जाना!" यों बाघ को धीरज बँधा कर सियार जुलाहे के पास गया और बोला-"क्यों भैया! यों खड़े क्या देख रहे हो ? कुछ कहो तो सही।"

मस्तान झुञ्झला कर बोला-"वाह ! खूब पूछ रहे हो। इतना भी नहीं समझ सकते ? देखते नहीं, सामने बाघ खड़ा है।"

उसकी बातें सुन कर सियार बोला-"वाह ! यही है तुम्हारी हिम्मत ? अच्छा, कहो तो मैं चुटकी बजाते उसे यहाँ से भगा सकता हूँ। एक बार जहाँ 'हुआँ' करूँ कि फिर देखना, बाघ सिर पर पैर रख कर भाग खड़ा होता है कि नहीं।" सियार ऐसे बोला जैसे वही बाघों का राजा हो। जुलाहे को उसकी बातों पर विश्वास न हुआ। उसने सोचा कि वह यों ही डीङ्ग हाँक रहा है। फिर भी सियार का रङ्ग खोलने के ख्याल से वह बोला-

"अच्छा भाई ! अगर तुम सचमुच बाघ को भगा दोगे तो मैं तुम्हें मुँह माँगा ईनाम दूँगा।" इतना सुनते ही सियार ने एक चार जोर से 'हुआँ' किया। आश्चर्य !बाघ दुम दबा कर भाग खड़ा हुआ। जुलाहे ने अपने माथे का पसीना पोंछा और सोचा-"अल्लाह का शुक्र ! मौत के मुँह से बचा !" सियार ने देखा कि जुलाहा बेफिक्र हो गया तो बोला-"अच्छा, दे दो मेरा ईनाम।" जुलाहे ने सुख की साँस लेकर कहा-"अच्छा, बोलो क्या चाहते हो ?" "मुझे और तो कुछ नहीं, निर्फ तुम्हारा कलेजा चाहिए।" सियार निधड़क माँग बैठा। जुलाहा आँखें फाड़ फाड़ कर देखने लगा। आखिर अपने को सम्हाल कर बोला-"अच्छा! इतना ही ! मैं तो सोच रहा था, जाने तुम क्या न क्या माँग बैठो ! डर था कि कहीं वह मेरे बूते के बाहर की बात न हो ! अच्छा, तो सुनो! तुमने मेरी जान बचाई है। इस जिन्दगी में मैं तुम्हारा एहसान कभी नहीं भूल सकता। लेकिन तुम्हें जरा सब्र करना पड़ेगा। थोड़ी ही देर पहले मैंने जो वादे किए थे उनको जरा पूरा हो जाने दो! अभी-अभी एक भेड़िए ने मुझसे रोटी का

टुकड़ा, जो मेरे पेट में था, माँगा। मैंने कहा-"अच्छा भाई ! ले लो। बस, वह मेरे पेट में घुस गया। उसका पीछा करते दो शिकारी कुत्ते भी आए और वे भी मेरे पेट के अन्दर चले गए। पहले उनको तो बाहर निकाल दूँ। फिर तुम मजे से मेरा कलेना ले लेना !" जुलाहे ने व्याख्यान झाड़ते वक्त मन की हैरानी झलकने तक न दी।

शिकारी कुत्तों का नाम सुनते ही सियार उछला और सिर पर पाँव रख कर नौ-दो-ग्यारह हो गया। सच है, किसी भी हालत में धीरज खोना नहीं चाहिए और अक्ल से काम लेना चाहिए।

खरगपूर में धनीराम नाम का एक अमीर आदमी रहता था। धनीराम अमीर तो जरूर था, मगर कभी दान-पुण्य करने का नाम नहीं लेता था। इतना ही नहीं, जो कोई उससे कुछ माँगने जाता तो उनकी खिल्ली उड़ा कर भगा देता था। जिनको उसकी यह आदत मालूम थी, वे कभी भूल कर भी उस ओर नहीं जाते थे और जो यह नहीं जानते थे, वे व्यर्थ परेशानी में पड़ जाते थे।

एक बार की बात है, उस शहर में बेचनराम नाम का एक मुसाफिर आया। सड़क पर खड़ा होकर वह सोचने लगा कि किन के घर जाने से उसे आसानी से खाना मिल जाएगा। सामने से जाते हुए एक आदमी को देख कर उसने पूछा-"भैया ! मैं परदेशी हूँ। क्या तुम मुझे कोई ऐसा घर बता सकोगे, जहाँ मुझे आज खाना मिल जाए !"

तब उस आदमी ने कहा-"यह तो में नहीं बता सकता। लेकिन एक बात बता देता हूँ। देखो, दूर पर वह जो घर दिखाई देता है, यहाँ कभी मत जाना ! वहाँ किसी को कुछ नहीं मिलता है।" यह कह कर उसने धनीराम का ऊँचा पर दिखा दिया।

यह सुन कर बेचनराम ने पूछा-"क्यों भैया ! क्या उस घर का मालिक इतना कञ्जूस है कि वह भूख से बेहाल आदमी को पेटभर खाना भी नहीं देता !" तब उस आदमी ने कहा-"इतना ही नहीं, भूखे आदमी के मुँह का कौर छीन न ले तो गनीमत समझो।"

लेकिन बेचनराम बड़ा उद्दण्ड आदमी था। उसने उस आदमी की बातें सुनी तो सोचने लगा-"क्यों न इस कञ्जूस की खबर !" बस, वह सीधे धनीराम के ही घर जा पहुँचा। किवाड़ खटखटाते ही धनीराम

चन्द्रलाल अवस्थी

ने आकर दरवाजा खोल दिया। "क्या चाहते हो ?" उसने पूछा। "भूखा हूँ। कुछ भोजन मिल जाए, इस आशा से आया हूँ। में दूर का मुसाफिर हूँ। थका-माँदा हूँ। आज यहीं खा-पीकर शाम होते ही चला जाऊँगा। पूछने पर मालूम हुआ कि इस गाँव में सबसे बड़े दानी आप ही है। इसलिए सीधे आपके यहाँ चला आया।" बेचनराम ने कहा।

इस पर धनीराम ने हँस कर कहा-"आप ठीक समय पर आ गए भाई ! मैं भोजन पर बैठना ही चाहता था कि आप आ गए। शास्त्रों में कहा भी तो है-'अभ्यागतः स्वयं विष्णुः।' घर आए मेहमान को दावत देनी चाहिए। रूखा-सूखा तो उन्हें खिलाया नहीं जा सकता। इसलिए मेहरबानी करके आप थोड़ी देर ठहर जाइए। मैं आपके लिए तरह-तरह की चीजे बनवता हूँ।"

धनीराम की बातों में जो भेद छिपा हुआ था, बेचनराम जान गया। लेकिन बिल्कुल अनजान की तरह बोला-"भैया! आप जितनी देर कहें, बैठा रहूँगा। दिन भी तो कुछ ज्यादा नहीं चढ़ा है।" यह कह कर वह बैठक खाने में आकर बैठ गया।

उसको यों आसन जमाते देख कर धनीराम का मुँह गुस्से से तमतमा उठा। उसने मन में कहा-"बैठो, थोड़ी देर में ही सारी कसर निकाल लूँगा। अभी जल्दी क्या है !" यह सोच कर यह चुप रह गया। इधर वेचनसम आँखें मूँद कर सोचने लगा कि "देखें, अब क्या गुल खिलता है।"

थोड़ी देर बाद धनीराम आया और कहने लगा-"अब उठिए ! हे विष्णु रूप, अतिथि-देव ! दाबत तैयार है। अरे ! कोई है वहाँ ? लोटे में पानी तो ले आना।" उसने नौकर को पुकारा। बेचनराम उठ खड़ा हुआ और नौकर के पानी लाने की राह

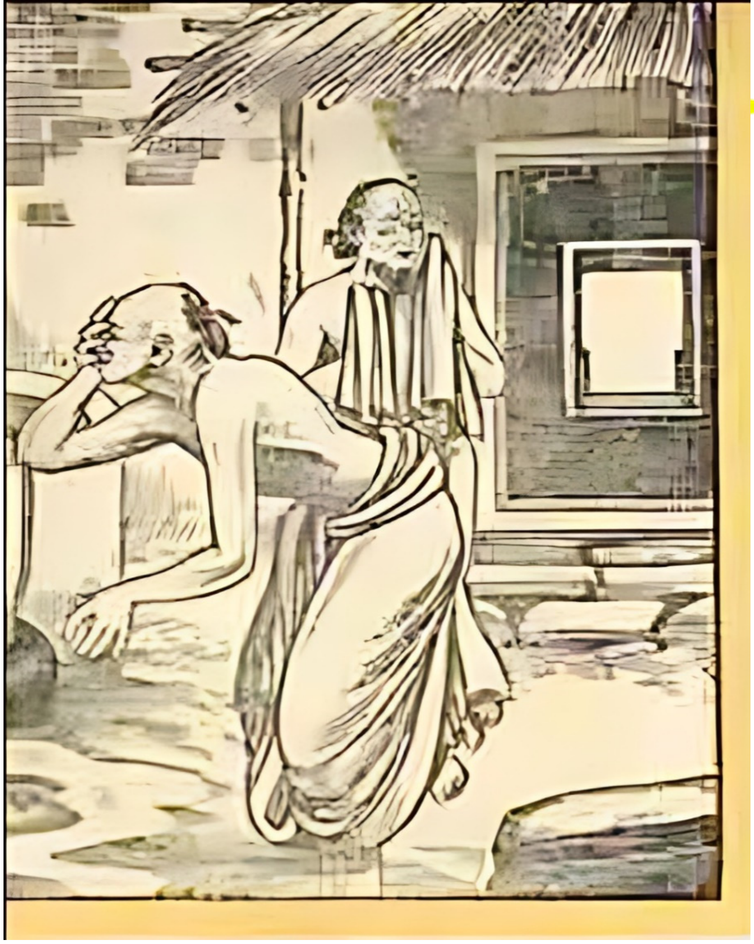

देखने लगा। लेकिन आया कुछ भी नहीं! न नौकर, न पानी। फिर भी धनीराम नौकर के हाथ से पानी लेने और हाथ-पैर धोने का अभिनय करने लगा।

बेचनराम ने सोचा-"अच्छा, तमाशा शुरू हो गया है। उसने हाथ-पैर धोने का वही अभिनय किया और भोजन के लिए तैयार हो गया। धनीराम ने नहीं सोचा था कि उसका मेहमान भी इस अभिनय में उस्ताद निकलेगा। उसने सोचा था कि वह बेचारा नौकर की राह देखता खड़ा रहेगा। "यह तो भारी चण्ट जान पड़ता है। अच्छा, देखें, आगे क्या होता है !" उसने सोचा और मेहमान से कहा-"अब रसोईघर में चलें।" यह कह कर वह उसे रसोईघर में ले गया। वहाँ दो पीढ़े रखे हुए थे और उन दोनों के सामने चाँदी की दो थालियाँ रखी हुई थीं। उन थालियों के चारों और बहुत से खाली परात और कटोरियों बगैरह रखी हुई थी। कहीं कोई खाने की चीज दिखाई नहीं देती थी।

धनीराम एक पीढ़े पर बैठ गया और अपने मेहमान से दूसरे पर बैठ जाने को कहा। लेकिन न कोई रसोइया आया और न खाने की कोई चीज़ ही आई। फिर भी धनीराम ने हाथ से दाल-भात मिलाने का अभिनय किया और बोला-"बस! बस ! उन्हें घी डालो।" बेचनराम तो उससे भी ज्यादा घाघ था। वह बोला-"नहीं, नहीं, भैया ! बस बस।" वह खाली थाली में दाल-भात मिलाने का अभिनय करने लगा।

धनीराम ने सोचा-"वाह ! यह तो मुझसे भी गुरु घण्टाल निकला। फिर बोला-"अच्छा ! अब मिठाइयाँ ले आओ ! उस कटोरे में रसगुल्ले हैं। इधर दे दो! अन्दर जाओ! कुछ और ले आओ ! हाँ, अतिथि-देव ! शरमाना नहीं! इतमीनान से

खाते जाना !" उसने बेचनराम से कहा। तब बेचनराम बोला-"वाह ! आपका रसोइया तो पाक-शाल में पण्डित मालूम होता है। राजा नल और भीम भी इसकी बराबरी नहीं कर सकते!" यों बारम्बार बड़ाई करता और ओठ चाटता वह उन अगोचर और अनूठे व्यजनों का खाद लेने लगा। "नहीं, नहीं, भैया ! अब और न डालना। मेरा पेट भर गया है। अब में बिलकुल नहीं खा सकता। एकदम जी भर गया है !" बेचनराम ने अदृश्य रसोइए को देख कर कहा।

यह सुन कर धनीराम बोला-"भैया! अगर मीठा खाते-खाते जी भर गया हो तो कुछ नमकीन चखो। कुछ कचौड़ियाँ उड़ाओ ! देखो, कितनी मुलायम हैं। मुँह में जाते ही गल जाती हैं। हाँ, भई । दही-बड़े परोसना तो भूल ही गए तुम ! अतिथि देव ! थोड़ा सा दही और ले लो न !"

बेचनराम ने एक रीती कटोरी की ओर देख कर कहा-"इस कटोरी में कौन सी नीज है, यह तो मुझे मालूम ही नहीं हुआ।" जैसे सचमुच उस कटोरी में कोई चीज हो। तब धनीराम बोला-"अच्छा, वह ! वह तो मलबार की चीज़ है। उसे 'अवियल'

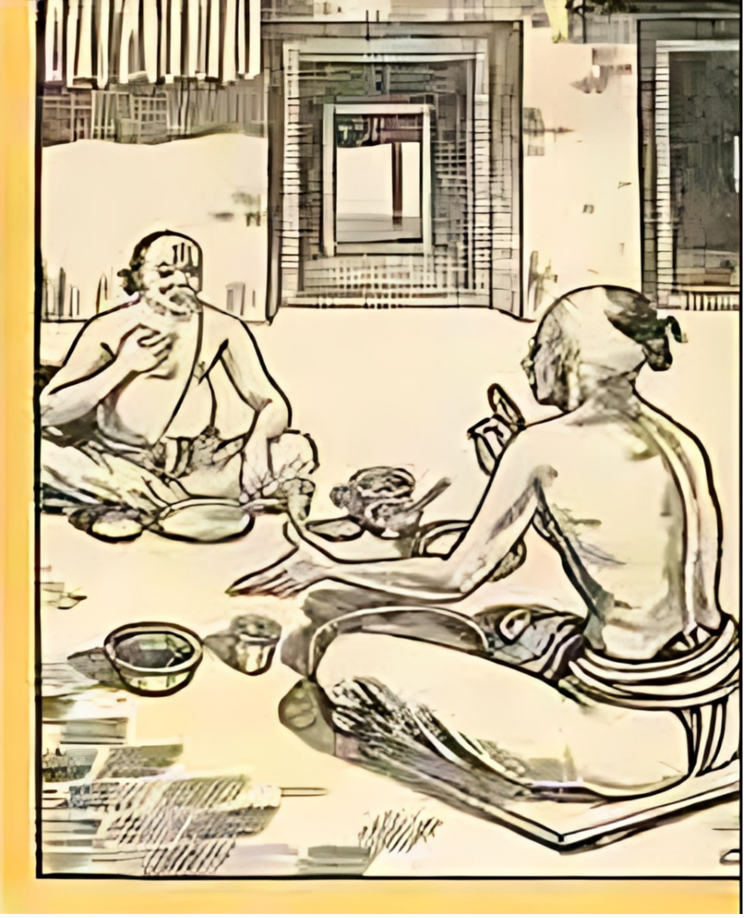

कहते हैं। थोड़ा सा चखो तो सही। देखो, कैसी स्वादिष्ट है ?"

अब बेचनराम को अच्छी तरह पता चल गया कि धनीराम आखिर तक ऐसा ही अभिनय करके, उसे भूखा ही भगा देना चाहता है। वह सोचने लगा कि इस दुष्ट को कैसे मज़ा चखाया जाए। आखिर उसे एक उपाय सूझ गया।

उसने सामने का एक लोटा उठा लिया और उसमें से कुछ पीने का अभिनय करते हुए बोला-"वाह ! आपको यह कैसे पता चल गया कि मुझे भाँग बहुत पसन्द है? वाह ! वाह! ठण्डाई कैसी छनी है ? क्या

मिठास है ! क्या कहा जाए, यह तो अमृत है। नहीं नहीं ! अमृत इसके सामने क्या चीज़ है ! यही देवताओं का सोम-रस है !" यों उसने लोटा खाली करने का अभिनय किया और उसे नीचे रख कर, नशे में चूर आदमी की तरह बड़बड़ाने लगा। यह देख कर धनीराम भौंचक्का रह गया। "यह क्या ?" कह कर वह उठने लगा। लेकिन बेचनराम ने मतवाले की तरह "यह क्या! कुछ भी तो नहीं !" कहते हुए, कस कर उसकी चोटी पकड़ ली और झुका कर धनाधन चार-पाँच धूमे घूँसे दिए।

धनीराम हाय-तौबा मचाने लगा। उसका चीखना-चिल्लाना सुन कर अड़ोसी-पड़ोसी जमा हो गए। धनीराम ने उनसे शिकायत की- "देखो ! भाइयो ! यह दुष्ट मेहमान बन कर आया और अब मुझी को पीट रहा है !" तब सब लोग बेचनराम को भला-बुरा कहने लगे- "क्यों भाई ! जिस पत्तल में खाते हो उसी में छेद करते हो !" और उसे खूब फटकारने लगे। तब यह सुन कर बेचनराम पछताते हुए बोला- "भइयो ! माफ करो ! इन्होंने मुझे भाँग पिला दी। नशे में मुझसे कुछ चूक हो गई हैं। तब धनीराम बोला- "नहीं, नहीं, बिलकुल झूठ। भाँग-वाँग कुछ नहीं। सब कुछ झूठ है।" "अगर भाँग की बात झूठ है, तो दावत की बात भी झूठ है।" बेचनराम बोला। यह कह कर उसने लोगों से सारी कहानी कह दी। बस, धनीराम की पोल खुल गई और रोग उस कञ्जूस की निन्दा करके अपने-अपने घर चले गए।

धनीराम की आँखें खुल गई। अपनी करनी पर बहुत पछताया और बेचनराम के पैरों पड़ गया। बेचनराम ने कहा-"अब किसी नूखे-प्यासे के साथ ऐसी बदतमीजी न करना।" धनीराम सचमुच गिड़गिड़ाने और कसम खाने लगा कि अब से वह मेहमान का कभी अपमान नहीं करेगा।

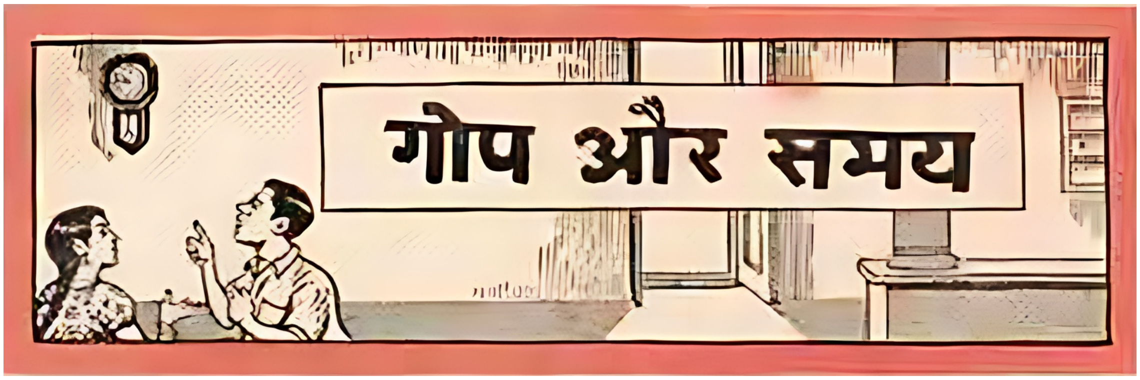

गोप पढ़ने से जी चुराता था। लेकिन उसकी बहन सुशीला पढ़ने-लिखने में बहुत रस लेती थी। गोप हमेशा यही सोचा करता था कि कैसे स्कूल जाने से उसका पिण्ड छूट जाए। लेकिन खुशीला स्कूल जाने में एक घड़ी भी देर नहीं करती। वह एक दिन भी स्कूल से अनुपस्थित रहना नहीं चाहती थी।

उनके बैठक खाने में दीवार पर एक बड़ी घड़ी थी। वह हर पन्द्रह मिनट पर आवाज करती थी।

एक दिन गोप ने बहन को उस घड़ी के सामने ले जाकर कहा-"बहन ! जरा उस घड़ी की ओर तो देखो।"

'नौ बजकर चालीस मिनट हो गए हैं। उठो, जल्दी कपड़े पहन लो ! स्कूल जाना है।" उसकी बहन उस घड़ी की ओर देख कर बोली।

इस पर गोप बोला-"बहन ! पड़ी नहीं, यह तो एक भूतनी है! यह हमेशा हमें स्कूल जाने की बात याद दिलाती है। यह सिर्फ हमारी ही नहीं, सभी नौकरी करने वालों, अध्यापकों और विद्यार्थियों की दुश्मन है। इसे जो कुछ सजा दी जाए, थोड़ी है।" वह मुठ्ठी बाँध कर बोला।

"भैया ! यह तुम क्या कहते हो ? यह घड़ी हमारी कितनी भलाई करती है? इस के बिना हमारा काम कैसे चलेगा ! इसे देख कर ही हम समय पर स्कूल जाते हैं। समय पर स्कूल जाने से हमको मास्टर की डाँट-डपट सुनने की नौबत नहीं आती।" सुशीला ने जवाब दिया। उसके यों कहते ही नौ बज कर पैतालीस मिनट हो गए। घड़ी का गजर खड़का। उनकी माँ अन्दर से चिल्लाई-"अरे ! तुम दोनों कहाँ हो। स्कूल का समय हो गया।"

सुनीता देवी

गोप दाँत पीस कर कहने लगा-"यह घड़ी नहीं,भूतनी है, राक्षसी है ! देखो तो कैसे चलाती है !" फिर भी लाचार था। कपड़े पहन कर जल्दी-जल्दी स्कूल चला। उसके पीछे-पीछे सुशीला भी उछलती चली।

गोप स्कूल तो जा रहा था, लेकिन उस का ध्यान उस घड़ी पर लगा हुआ था जो अब उसकी बैरन बन गई थी। वह बहन से बोला-"बहन ! तू घड़ी की बहुत बड़ाई कर रही है। तू अभी नादान है। तू नहीं जानती, वह घड़ी नहीं, एक भूतनी है। उस का मुँह कभी बन्द नहीं होता। यह हमेशा कुछ-न-कुछ बकती ही रहती है। यह लड़को को स्कूल दौड़ाती है। नौकरी करने वालों की चैन से खाने भी नहीं देती। वह गाँव जाने वालों की गाड़ी छुड़ा देती है। वह बड़ी दुष्ट है।" यह कह कर वह दाँत पीसने लगा। किसी तरह दोनों भाई-बहन स्कूल पहुँचे। चार बजते ही छुट्टी मिल गई।

लड़के सभी अपने-अपने घरों के सामने खेल के मैदान में खेलने लगे। खेलों में डूब कर वे सारी दुनियाँ को मूल गए। ऐसे समय 'टन टन' करके घड़ी की आवाज़ आई। बस, गोप की माँ पुकार उठी-"बेटा! समय हो गया। खेलना छोड़ो और खाने आओ।"

गोप एक दम जल-भुन उठा। उसे बहुत गुस्सा आया। खून खौलने लगा। उसने एक रोड़ा उठा लिया और दाँत पीसता बैठकखाने में गया। फिर उसने रोड़ा ज़ोर से घड़ी पर दे मारा। घड़ी का सीसा चूर-चूर हो गया। बस, गोप को और कुछ सुनाई नहीं दिया। घड़ी अब अक्लमन्द लड़के की तरह चुपचाप ध्यान में मग्न हो गई थी। गोप ने अकड़ते हुए बहन से कहा-"बहन ! मैंने इस बला से पिण्ड छुड़ा लिया। अब कोई फिक्र नहीं। अब हम जितनी देर चाहें खेलते रह सकते हैं। कोई रोकने वाला नहीं।" लेकिन वह रोती हुई अन्दर भाग गई।

CHANDAMAMA (Hindi) DECEMBER 1952 Regd. No. M. 5452

रंगीन चित्र-कथा, चित्र — ५